आग

और

पानी

अम्मा और दादा

को

सादर अर्पित

<u>लेखक परिचय</u>

नाम	–	**राजीव रंजन**
शैक्षणिक योग्यता	–	**B.A. (Hindi Hons)** **B.C.A.** **M.C.A. (University of Pune)**
स्थायी पता	–	C/o - उमेश चंद्र ठाकुर ग्राम + पो. रोहुआ भाया – वारिश नगर जिला – समस्तीपुर बिहार

E-mail : storyofrajeev@yahoo.co.in
Tel.No. : 09423201349
06274265413

<u>लेखकीय</u>

साहित्यिक कृतियाँ सामाजिक अवस्थाओ के श्वेत पत्र होते हैं । व्यक्ति "है" और "होना चाहिए", के मध्य बार-बार स्वयं को परिभाषित करता है । नि:संदेह एक साहित्यकार इन्ही अवस्थाओं की साहित्यिक अभिव्यक्ति करता है । विधा की दृष्टि से चुँकि साहित्य अधिक संप्रेषणीय है अत: इस "है" और "होना चाहिए" , के तोल को लेखक पाठक की गहराई तक उतार पाने में अधिक सफल होता है ।

ग्राफ पेपर पर बिन्दुओं को नियत कर उन्हे मुक्त हस्त मिलाकर परिणामों की दिशा तय करने के गणितीय तरीके की नाई मैने भी कुछेक बिन्दुओं को परिभाषित कर मानव सभ्यता की दशा और दिशा के मुल्यांकन की चेष्टा की है ।

चुँकि इनमें अधिकांश कहानियाँ मेरे पटना में होते हुए लिखी गई अत: ये बिहारकी तत्कालीन अवस्था से अपना जुड़ाव रखती हैं । और मेरी शारीरिक अवस्था अगर देखी जाय तो कहानियों में युवा बार-बार "स्वयं" को "युग" में ढूँढ़ता है । तथापि ये इतनी सामान्यीकृत है कि "युग" "जग" में अपना मूल्य ढूँढ़ता हुआ दिखता है ।

पुणे.
५ फेब्रुवारी २००७

राजीव रंजन
E-mail : storyofrajeev@yahoo.co.in

अनुक्रमाणिका

१)	गुरु	०१
२)	आग और पानी	०२
३)	पागल आदमी	०४
४)	मैं पाया विश्राम	०६
५)	बुत	०७
६)	आँखिन देखी	०९
७)	शासक से	११
८)	मैं एक राष्ट्र हूँ	१४
९)	लाल	१७
१०)	तू बागवान ?	२०

गुरु

गुरु, ज्ञान और शिष्य के मध्य पहले दक्षिणा का प्रावधान था । ज्ञानार्थी विपन्न था।

प्रीत के भी पल्लवन में द्वापर में भी मुट्ठीभर चावल लगे थे । ज्ञान का मूल्य तो प्रीत से कहीं अधिक है । बिना निर्धारित दक्षिणा के इस घोर कलियुग में तुम ज्ञान कैसे पा सकते हो । — गुरु ने कहा ।

ज्ञानार्थी नें कातर दृष्टि से गुरु को देखा ।

पाषाणवत् गुरु ने कहा - मैं तुम्हारी कोई सहायता नहीं कर सकता ।

ज्ञानार्थी के साथ ऐसा पहली बार नहीं हुआ था । पर इस बार उसने स्वयं को कठोर किया । बोला- अस्तु, जाता हूँ । अचर में गुरुत्व के प्रतिष्ठित कर ज्ञान सीखने के पौरुष की फिर परीक्षा होगी । ज्ञान रुपी प्रकाश के निकसन में अपनी अस्थि-मज्ज़ा को समिधा बना दूँगा । अर्थ और गुरुत्व दोनों को पुनर्विचार करना पड़ेगा ।

गुरु बिल्कुल अचंभित रह गया ।

- तो गुरुत्व को चुनौती है यह ?
- अर्थ को भी ।
- मुझसे ही आकांक्षा क्यों।
- आप समर्थ हैं इसीलिए ।

लगा कोई एकलव्य कर्ण का तेज लिए ज्ञान की भिक्षा माँगने फिर द्वापर आया है ।

गुरु से अलौकिक आभा निकलने लगी । उसने ज्ञानार्थी को गले लगा लिया । पुत्र, तुम अर्जुन ही हो । बैठो ! हृदय के कपाट मैं तुम्हे अन्तर्लीन कर लूँ ।

दोनो एक दूसरे के सम्मुख बैठ गए। गुरु के औदात्य और शिष्य की लगन से ज्ञान की गंगा बह निकली।

द्वापर की भूल को गुरु ने कलियुग में सुधार लिया ।

आग और पानी

मैं जानना चाहता था कि ये खुश कैसे हैं । इनके घर में न तो आग था न पानी । यहाँ मसानी सन्नाटा था । ऐसा नहीं कि ये बोलते बतियाते नहीं या हँसी मजाक न करते हों । ये लोग एक दूसरे से खूब बातें करते थे । इनमें एक पूरा हँसोर था । हँसी मजाक का लम्बा दौड़ चलता था इनके बीच और बातों का मुद्दा । मत पूछिए मुझसे दुनिया का कोई भी ऐसा मुद्दा न या जिसपर ये लोग अपनी सही-गलत जानकारी न रखते हों, और तफसरा न करते हों । परन्तु न जाने क्यों हर आवाज खामोशी बढ़ाती थी । हर मजाक माहौल को मातमी बनाता था ।

मैं चिढ़ गया था । कई दिन आए हो गए कम बोलने की मेरी आदत है, या यों कहिए कि अपरिचितों-अल्पपरिचितों में न बोलने की । एक मेरे आगे से गुजरा चहकता हुआ । मैंने उसे थामा । वो जल्दी में था । शायद मैंने उसे गलत समय में रोक लिया था । पर जब मैंने उसे रोक ही लिया तो पूछ बैठा एक सीधा सवाल ।

यहाँ आग और पानी नहीं है ?

वो एकदम सन्न हो गया । उसने अजीब तरह से मेरी ओर देखा फिर भारी कदमों से चला गया बिना कुछ बोले । मुझे लगा मैंने नाहक इसे गमगीन कर दिया । एक बात मैंने गौर की, शायद इसे आग और पानी की जरुरत है और इसके पास नहीं है ।

तो यहाँ आग और पानी है हीं नहीं ? मैं और अचंभित हो गया। मैने ठान लिया कि शाम को इनकी सभा में मैं बिना बुलाए भी पहुचूँगा और पता लगाऊँगा कि क्या यहाँ सचमुच आग और पानी नहीं है।

मैं बेताबी से शाम का इंतजार कर रहा था । शाम हुई और इनकी महफिल में एक दो ही आए थे कि मैं जा पहुँचा । मेरा गर्मजोशी से स्वागत हुआ । ये लोग बाते कर रहे थे । एक-एक कर लोग आ भी रहे थे । सब अपनी महफिल में मुझे पाकर खुश थे । जब मैंने देखा कि इनकी संख्या पर्याप्त हो गई है तो मैंने इनके गप्पो के बीच बिना लाग लपेट के एक सीधा सवाल दागा ।

आप लोगों के पास आग और पानी में नहीं देखता ? आप रोटी कैसे बनाते और खाते हैं ?

सब सन्न रह गए । मुझे लगा जैसे मैंने बेअदवी की । ये सवालात नहीं पुछने चाहिए थे मुझे। उनमें एक कृध्द हो गया, वह जोर से बोला-आपके पास है आग और पानी। आप कहाँ से रोटी लाते हैं।

मैंने बात संभालने की कोशिश की । देखिए मैं नया हूँ । और मैं तो होटल में खाता हूँ । इसलिए मुझे जरुरत नहीं पड़ी इसे रखने की । पर बात संभली नहीं । मैं बेइज्ज़त हुआ और उनकी महफिल से उठकर चला आया ।

शाम बीत गई । रात हुई । मैं खाने भी नहीं गया । मैंनं ठान लिया कि मैं पता लगाऊँगा कि जब इनके पास आग और पानी नहीं है तो ये रोटी कैसे बनाते हैं ।

बाजू के कमरे में चहल-पहल हुई । मुझे लगा अब ये जरुर रोटी बनाऐंगे मैं किवार की फाँट से चोर की तरह झांकने लगा । मेरा अनुमान सही था । उनमें एक उठा । उसने आटा निकाला । एक के लोटे में पहले से थोडा पानी था । उसने आटा गूथा ।

तो क्या ये लोग पानी चुराकर रखते है ? और आग भी । मेरा अचरज बढ़ने लगा । इतने में दूसरा उठकर आया । उसने अपनी कमीज खोली और लेट गया । पहले ने रोटी बनाई ओर उसकी छाती पर रख दी बिल्कुल जैसे तबा हो । और हे भगवान ! रोटी पकती चली गई । एक -- दो -- तीन ---।

वे उठे । उनकी रोटियाँ पक चुकी थी । एक बड़ी बाल्टी के उपर चार-पाँच झुक गए । उनके आँखो से पानी गिरने लगा और बाल्टी भर गई लवालब ।

मैं हैरान था । उनकी रोटी पक चुकी थी । पानी भी उनके पास था । सबने मिलकर ठहाका लगाया । मुझे लगा जैसे श्मसान में प्रेत हँस रहे हो मैं भागा, बदहवास । हे मेरे भगवान ! उस आग को हवा और पानी को दिशा मिलेगी ?

पागल आदमी

वह एक पागल आदमी था । उसके पास तूलिका, पेंसिल, कैनवास, रंग की जगह छोटे-बडे दसियों चाकू थे । आइने के सामने वह खड़ा हो जाता और अपने चेहरे को चाकू से चीरकर, कुरेदकर महापुरुषों की तस्वीरे बनाता था । पूरा चेहरा लहू-लुहान हो जाता । वह घायल हो जाता । पर घाव सूखते ही आरी-तिरछी रेखाओं में किसी-न-किसी महापुरुष के चित्र उसके चेहरे पर उभर आते । वह खुद को एक कलाकार कहता था । पता नहीं उसे दर्द होता था या सुख । पर यही उसकी कला थी ।

उसके चेहरे पर छोटे-बडे दसों-बीस महापुरुष के चित्र थे । कला का उत्कृष्ट नमूना । हाव-भाव जीवंत । कद-काठी सटीक । टैगोर बिल्कुल टैगोर की तरह । गाँधी की तस्वीर बिल्कुल गाँधी । बुद्ध ध्यानमग्न । राम युद्ध लड़ते हुए या आशीष लुटाते हुए । लगता था हर तस्वीर अब बोल पडेगी । पता नहीं वह अपने को इतना कष्ट क्यों देता था । पर व पूरी तन्मयता के साथ यह सब करता था ।

उसका यह काम सब के लिए कौतुहल का विषय था । मैंने एक दिन उससे पूछा कि वह ऐसा क्यों करता है।

उसने कहा - ये लोग, ये महापुरुष अब इस दुनिया में नही रहे पर मैं इन्हें फिर जिंदा करना चाहता हूँ । मैं चाहता हूँ कि लोग इन्हें भूले नहीं इसलिए मैं अपने चेहरे पर इन्हे वे करने की कोशिस करता हूँ । जब मैं चलता हूँ तो मुझ लगता है कि ये भी चल रहे हैं । जब मैं रुकता हूँ तो मुझे लगता है कि ये भी रुक गए हैं। मैं हँसता हूँ तो मुझे लगता है ये भी हँस रहे हैं। जब मैं रोता हूँ मुझे लगता है ये भी रो रहे हैं । इनका मर जाना मुझे बरर्दास्त नहीं है। इसीलिए मैं ऐसा करता हूँ। और मैं चाहता हूँ लोग भी ऐसा हीं करें। हर कोई अपना चेहरा काटकर-चीरकर गाँधी की तरह, बुद्ध की तरह, राम की तरहख मुहम्मद की तरह कर ले । राम जी उठेंगे । गॉधीजी उठेंगे । बुद्ध जी उठेंगे । मुहम्मद जी उठेंगे ।

- तो क्या तुम्ह लगता है कि लोग ऐसा करेंगे ? तुम्हारी बात वे मान लेंगे ?

थोडा नाखुश हो गया वो । उसने कहा- न मानें मेरी बला से । अपना काम कर रहा हूँ । फिर दार्शनिक सा होकर बोला । याद रखना यार ! गंगा जो है गंगा, दूषित हो रही है । नाले के पानी से भी खराब होती जा रही है । पर

एक अंजुली गंगा मेरे पास रहेगी ।
एक अंजुली गंगा हरदम बची रहेगी ।।

असने दोनो हाथों को सटाकर अंजुली बनाकर अभिनय के साथ कहा ।

एक खास बात . . . . । वो खलनायकों की तस्वीरे कभी अपने चेहरे पर नहीं बनाता था । उनका नाम सुनकर वह गुस्से से हॉफने लगता । और कही तस्बीर देख लेता तो उसपर मिर्गी का दौरा जैसे आने लगता । भूखे शेर की तरह तस्वीर पर झपटता, उन्हे टुकरे-टुकरे कर देता । रोकने-वालों का गला घोंट देना चाहता । जोर-जोर से चिल्लाने लगता और अंत में बेहोश होकर गिर जाता । उसने अपने घर की सभी किताबों से, अपने बच्चों की किताबों से हिटलर, मुसोलिनी या अन्य ऐसे व्यक्ति से संबंधित पन्नो को फाड दिया था । डाक्टरों के अनुसार ये सब पागलपन की शुरुआती लक्षण थे।

कुछ दिन पहले मैंने सुना कि आजकल वह और अजीब हो गया है। पसेरी - दो पसेरी खाता है। सवेर उठकर दौड़ने निकलता है और दसों मील तक दौड़ता है । फिर दिनभर कसरत करता है । लोगों के लिए और मेरे लिए भी यह एक नया आइटम था । चर्चा का, कामेंट का, टाइम पास का । डिटेल के लिए मैं पहुँचा और अपनी कुटिलता को दबाते हुए मैंने बिल्कुल आत्मीय भाव से उससे पूछा कि वह ऐसा क्यों कर रहा है ।

वह संजीदा हो गया उसने कहा या मैं अपने चेहरे पर महापुरुषों की तस्वीरे तो बनाता हूँ । पचासों तस्बीरें अबतक बनी हुई है मेरे चेहरे पर । लेकिन उन्हे एक बार में कुछ ही लोग देख सकते है । पाँच या दस । इसलिए मैं बड़ा होना चाहता हूँ । खूब बड़ा ! पहाड इतना बड़ा । हिमालय इतना बड़ा । ताकि बहुत से लोग, सारा समाज, सारी दुनिया इन महापुरुषो को देख सके । इसलिए मैं खूब खाता और खूब कसरत करता हूँ । ताकि मैं उतना बड़ा हो सकूँ ।

मुझे हँसी आ गयी । पागल हो तुम ! एक सा भी कहीं हुआ है ? मैंने कहा ।

वह गंभीर हो गया। सिर्फ इतना ही उसने कहा - कोशिश करने में क्या हर्ज है । मैं चला आया।

बहुत दिनों के बाद एकादिन वह मेरे पास आया और मुझे लेकर वह मैदान में गया। फिर उसने अपनी जेब से एक पुरिया निकाली । उस पुरिया में थोडा पाउडर था ।

उसने कहा - यार, खाने और कसरत करने से कोई फायदा नहीं हुआ । पर मैंने इस पाउडर का इजाद कर लिया है । इस पाउडर को खाने से मैं पहाड इतना बड़ा हो जाऊंगा और फिर मेरे चेहरे पर बने महापुरुषों को पूरी दुनिया देख सकेगी । इतना कहकर वह खड़ा हो गया । उसने उस पाउडर को अपने मुँह में रखा और हे भगवान ! वह भूत-प्रेत की तरह बड़ा होने लगा ।

और वह बड़ा हो गया। हिमालय इतना । उसक चेहरे पर खुदे गाँधी, बुद्ध, राम, मुहम्मद न जाने कितने महापुरुष दूर-दूर से नजर आ रहे थे ।

मैं पाया विश्राम

और मैंने उसकी ओर पीठ कर ली । हुआ यह कि निहोरते-निहारते अनंत मेरी सीमाओं में बँध गया था । परंतु उस चिर शांति और महान हलचल को निर्णीत कर पाना मेरे लिए असंभव सा हो गया था। मेरे स्थापित तथ्य ज्यों सत्य की और बढ़ते, विलोमित हो जाते। और मैं वह विस्थापित हो जाता। वह मेरी बाँहो में बद्ध होकर भी नजरों में टिक नहीं रही थी ।

मैंने उसकी आँखो में आँखे डाली । महान तेज में परम शून्य की छाया दिखी । उसे देखने के लिए मैंने उसकी और पीठ कर ली । मैं वही देखने लगा जहाँ वह दृष्टि एकाकार हो गयी ।

मैंने पाया चारो ओर मैं ही देखा जा रहा हूँ । मैं ही परम लक्ष्य हूँ । मैं स्वयं को देखने लगा और अंत मे मैंने आँखे बंद कर ली । मैं हर कहीं उसकी आँखो से देख रहा था ।

बुत

वो एक बुत थी जो प्यार करने के लिए बनाई गई थी । उसके होठ आईसक्रीम के, कपोल रुई भरे मलमल के, बाल रेशम के काले धागों के, ग्रिवा, हाथ, पैर हाथी दाँत के एवं वक्ष स्पंज के थे । आँख वाली जगह में शराब भरकर उनके बीच एक-एक मोती रख दी गई थी और उपर से करीने से प्लास्टिक कवर चढा दिया गया था ताकि शराब छलके नहीं । पलकों की जगह गुलाब की पंखुरियाँ लगा दी गई थी । इस तरह वह संपूर्ण सुंदर थी । उसे चौराहे पर लगा दिया गया था ताकि वह सबको उपलब्ध हो सके । रात को मरम्मत का समय रखा गया था, दिन भर में हुई टूट-फूट की मरम्मत के लिए ।

चौराहे पर जहाँ उसे लगाया गया था वह एक बड़ा चबुतरा था । लगाने वाले समझदार लोग थे। उन्होंने वास्तु का पूरा खयाल रखा था । चारो ओर से रास्ता, बीच में चबुतरा गोलंवर जैसा, एक मंजिला इतना उँचा । चढ़ने के लिए सुंदर-धुमावदार सीढियाँ और बीचो बीच रखी वह बुत । चारो ओर तरह-तरह के फूल, छोटे पेड, झाडियाँ और उपर आसमान ।

यह शहर का मुख्य चौराहा था क्योंकि इसके आगे की ओर बाजार और पीछे की ओर रिहायशी इलाका था । दाई बाजू की ओर शहर का सबसे बड़ा अस्पताल और बाई बाजू की ओर स्कूल-कॉलेज-हॉस्टल थे । चौराहे के पास एक बडा सा मयखाना और छोटा मार्केट कंप्लेक्स था । पास ही ठ़र्रा बेचने वाले की दुकान भी थी ।

यही सब देखकर और लोगों की दिन भर की भागा-भागी वाली जिंदगी में रस लाने के लिए लोगों में यह जगह चुनी थी । शुरुआती झिझक के बाद लोगों ने इसे स्वीकार कर लिया था । प्रेमी युगल इसी दुनिया में, इस दुनिया को छोड यहाँ नई दुनिया बसाने लगे थे । मयखाने से लोग निकलते और बुत को देखा कोई शेर बोलते । गुजरते लोग इसे जरुर देखते । कुछ नजरें भरकर, कुछ चोरी-चोरी ।

इसे छूने, चूमने, छेडने पर कोई पाबंदी नहीं थी । असल में वह इसी के लिए बनाई ही गई थी। लोग ऐसा करते भी । आँखों में आँखें डालते, लबों से लबो को सटाते । बाँहे फैलाते और बाँहों में भर लेते। कुछ वादे होते, कुछ कसमें खायी जाती ।

यह सिलसिला दशकों चलता रहा । जिनकी जवानी में यह बुत बनी थी वे बुढ़े हो चले और उन पोते यहाँ आने लगे थे । बुत अब भी वैसी की वैसी ही थी ।

एक दिन गजब हुआ । बुत जीवंत हो उठी । सिर्फ चलती नहीं थी, बाकी सबकुद जिंदा आदमी जैसा हो गया । लोगों में खबर फैली जंगल के आग की तरह । दौड़े, एक पर एक । ठेलम-ठेली, धक्कम-मुक्की, मारा-मारी । मेले इतनी भीड़ हो गई । लोग बुत से लिपटते, चूमते । तभी दूसरा उसे झटका दे देता और खुद लिपट जाता ।

घंटो, फिर दिन, दसियों दिन बीते । बुत जिंदा बनी रही । ठेलम-ठेली जारी था । पास मेला सज गया था । तरह-तरह की दुकानें लग गई थी । मेले में एक नाच भी आ गया । बुत को चूमने में बाजी मारे लोग और भीड़ से हारे लोग सब नाच देखने गए । नाच शुरु हुआ । बोतलों की सीलें टूटने लगी । हवाई फायरिंग होने लगी । सीटियाँ बजने लगी । मंच पर नाचती लड़कियों के भारी नितंब, मांसल वक्ष,सुडौल जाँघ चारो ओर धिंट गए ।

दूर कसाई की दुकान पर तीन-चार लोग आ गए थे । आप कितना लेंगे - एक किलो, आप- आधा किलो, आप हुजूर ..... दो कीलो ।

इतना पूछ लेने के बाद कसाई आस्वस्थ हो गया कि ७-८ कीलो की बिक्री है । उसने एक खस्सी को हलाल किया । खाल उधेरा और माँस के छोटे-छोटे पीस बनाकर उन्हे तौलने लगा ।

चिपकते चूमते लोगों नें बुत को लहू-लुहान कर दिया था । उसके होठों और कपोल से खून बह रहे थे फिर भी वह मुस्कुराए जा रही थी । लोगों का उससे लिपटना और चुमना जारी था । कसाई की दुकान पर माँस के छोटे-छोटे हुकरे फुदक रहे थे । हौले-हौले हाँफती बुत के वक्ष की तरह । या फिर मारा-मारी करते आदमी की तरह ।

<u>आँखिन देखी</u>

मैने उसे देखा । वह ओस से घुले पल्लव की तरह थी । उसका कण-कण सागर की तरह शांत, सिर्फ होठ हिले थे हौले-हौले ।

मै उसे देखना चाहता था । उसे छेड़ना चाहता था । उसे छूना चाहता था । उसे चूमना चाहता था । पर बीच में दीवार थी । ईंटगारों से बने दीवारों से भी सख्त । उसके अंदर क्या था मैं नही कह सकता परन्तु मेरे भीतर एक तड़प थी, एक बैचेनी थी ।

उस समय में वहाँ रहता था । मेरे कई दोस्त थे ।

(ए) ने कहा बड़ी बदनामी होगी । लफड़ा होगा छोड़ दे यह चक्कर । उसने मुझे ओर लोगों के नाम गिनाए जिन्हे ऐसे ही मामलों में मुह की खानी पड़ी थी ।

(बी) आध्यात्मिक था । उसने पाप-पुण्य का हवाला दिया । मुझे बताया कि यह तुम्हारा ब्रह्मचर्य आश्रम है ।

(सी) पढ़ाकू था । उस के विचार में मेरा केरियर चौपट हो जाता । पढ़ाई के बाद बंगला, गाडी, पैसा

(डी) ने कहा यार फिट है। Eat drink and be marry, tomorrow you will die.

सबको सुना । मामला उलझ गया था । मैं फंस गया था । किसी ने बनाया होगा तिल का ताड़, यहाँ पूरा पहाड बन गया था ।

इसके बाद गजब हुआ । मेरे शरीर पर पीठ की ओर से दो बड़े-बड़े पंख उग आए और मैं उड़ने लगा । मुझे भूख प्यास नहीं आती । मैं थकता भी नहीं । उनवरत उड़ता रहता । मैं लोगों को देख सकता था । पर लोग मुझे नहीं देख सकते थे । मैं अपने हाल से खुश नहीं था ।

एक जगह बड़ी अट्टालिकाएँ थी चारो ओर से । बीच मैं एक बड़ा मैदान था । चारों ओर कुछ लोग ढ़ोलक, नगाड़ा पीट रहे थे । बाकी लोग भाग रहे थे । एक के पीछे एक । मैं रुक गया । दौड़ देखने । कौन बाजी मारता है यह देखने । पर ये क्या ? मुझे अपनी आँखो पर भरोसा न हो रहा था । लोग ज्यों-ज्यो पास आ रहे थे मैदान की लम्बाई बढ़ती जा रही थी । लोग भाग रहे थे । उपर बैठे ढोल नगारे बजा रहे थे । जोर ओर जोर से । कोई हाँफ कर बैठ जाता लोग फबती कसते बढ़ जाते। किसी के पांव फिसल जाते । लोग कुचलते हुए आगे बढ़ जाते । मैदान लम्बा होता जा रहा था । लोग भागते जा रहे थे । अंतहीन दौड़ ? मैं दु:खी हो गया ओर ठूठ से उड़े पंछी की भांति वहाँ से उड़ चला ।

आगे जंगल था । तबतक रात हो गई थी । नीलगायों का झुंड, कोई सौ-डेढ़सौ, एक साथ सोई थी। तभी खर-र-खर--। हल्की आवाज जैसे कोई पत्ता हवा से खरखराया। गायें चौंकी । लाल-लाल आँखे, वो शेर था । भागी सब की सब पूरा झुंड । शेर लपका ओर एक छोटा बच्चा उसके जबड़ो में था । मेरी आँखे नम हो आई । क्या कर सकता था मैं ।

समंदर के किनारे भारी मन से उड़ा जा रहा था कि देखा दो युवा तापस और उन्हें घेरे वानर-भालू। एक समाधि में लीन था । रुका तो बात खुली । उसकी पत्नी को समंदर पार वाले देश का राजा उठा ले गया है । और यह तापस उस राजा से युध्द करेगा । पर समंदर कैसे पार करें । सो समाधिस्त है । तीन दिनों से भूखा प्यासा। रास्ता देगा समंदर तब तो पार करेंगा । पार करेगा तब तो पत्नी को पाएगा ।

हे समंदर. दुखिया है यह दे दे इसे राह । क्या जाएगा तेरा । हाथ जोड़कर, आँखे मुंद कर मैंने विनय की । समंदर गर्जा - ऊपर तक लहरें उठी ओर दूर तक तट पर पानी पसरकर सिमट गया । मैं तो ऊपर था सो बच गया पर तापस अपने साथियों के साथ भींग गया । मैंने डर कर आँखे बंद कर ली ।

पर फिर कोई गर्जा । डर से अबकी आँखे खुल गई । मैंने देखा तापस अग्नि के समान लाल हो गया है । चाँद सी सुंदर काया पर पर्वत के समान बल्लियाँ उग आई । तापस गर्जा..... ।
समंदर ही सोख लेता हूँ ।

समंदर भागा आया भींगी बिल्ली की तरह । तापस के चरणां में गिर गया ।

मैंने देखा, तापस तो बडा चमत्कारी है । मैं भी नीचे आया । तापस के चरणों में गिरकर मैंने कहा आप तो देव तुल्य हैं । मैंने आपकी शक्ति को देखा है । आप देवता हीं है । आप मेरे अंदर की बात जानते हैं । मेरी समस्या जानते हैं । प्रभु आप मेरा उध्दार कीजिए ।

तापस बडा दयालु था । उसने मेरे सिर पर हाथ फेरा । मुझे उठाया और गले से लगा लिया। उसने मुझसे कहा, तुम तो मेरे भाई के समान हो । तेरा कष्ट दूर हो ।

मेरे शरीर से पंख गायब हो गए थे । मैं फिर सामान्य आदमी हो गया था । मैं सीधा उसके पास गया । हमने एक दूसरे को देखा । बाँहें फैली फिर सिमटती किरणों के साथ बंद होती पंखुरियों की तरह हम नजदीक आने लगे ।

मैंने उसे फिर देखा । अब भी बहुत कुछ या उसमें देखने को ।

शासक से

इससे पहले मैं शासक से कई बार मिल चुका था और मैं उनसे बार-बार कह चुका था कि आसमान को बाँटने की कोशिश न की जाय । ये धरती, ये दररुत, पहाड, नदियाँ सबमें सरहद डाल दी गई थी और कुछ में हुजूम का तो कुछ में अपना लेबल चिपका दिया गया था । मुझे इसपर गहरी आपत्ति थी । परंतु तब मैं अपना आपा खो बैठा जब शासक ने कहा "जिसकी जमीन उसका आसमान ।"

मैं चीखा "न जमीन तुम्हारे बाप की है, न आसमान" मैंने शासक को समझाया, जमीं पर दीवार डालकर तुमने जो सरहद खींचा है उसे आसमान तक कैरी मत करों । ये आसमान उड़ती चिडियों के हैं । चाँदनी और चकोर के हैं । मेरे दिल में उठते ज्वार और गिरते भाटा के हैं । तुम्हारे प्लेन, जेट और मिसाइलों के नहीं हैं।

शासक मेरे सामने बैठा था । हम जिस कमरे में बैठे थे वहाँ मद्धिम रोशनी थी । बाजू के कमरे, बरामदा, आँगन और बाहर के मैदान में घुप्प अंधेरा था । मेरे लाख कहने पर भी वहाँ प्रकाश की व्यवस्था नहीं की गई थी । मैंने बात उठाई —

शासक ! दीपावली को मेरी अम्मा तालाब के किनारे पाँच दिया जलाती है । एक पति के लिए, दूसरा बेटे के लिए, तीसरा लक्ष्मी के लिए, चौथा पुरखौं के लिए और पाँचवा गाय, गौरु जड़, जमीन के लिए । पर अपने लिए बिल्कुल नहीं ।

शासक ने पूछा :- अपने लिए क्यो नही?

क्योंकि ये सब जबतक हैं उसे उजाला मिलता रहेगा ।

मैने कहा- शासक, बच्चा जब जनमता है तब उसे सिर्फ भोजन चाहिए होती है। बाकी चीजें हम उसपर लाद देते हैं । इसी से जटिलताएँ पैदा होती है । संसाधन हमारी संस्कृति बन जाती है ।

शासक, हमें अपने आचरणपर सोचना चाहिए और तुम्हें अपने फतवों पर ।

शासक बोला - हम इस जटिल को सरल कर लेंगे । हमें प्रबंधन आता है ।

फिर भी तुम अपनी आवश्यकताओं को चिन्हित कर लो । कहकर मैं बाहर आ गया ।

धरती के अलावा चाँद, जंगल, बुद्ध, नेप्चुन, सूरज न जाने कितनों पर लेबल चिपकाने और झंडा लहराने की होड़ मची थी । शासक व्यस्त था । अफरा-तफरी । फतवों की ब्राड कास्टिंग और प्लानिंग की टेलीकास्टिंग जोड़ों पर थी । धरती के टुकरों को आसमान में चिपकाने की कोशिस चल रही थी । आसमान को कई टुकरों में बाँट दिया गया था ।

उठा तो देखा आसमान, जो झील जैसा नीला हुआ करता था । जिसपर मेरी प्रियतमा की काली जुल्फो जैसी घटाएँ छाया करती थी, बदरंग हो चुका था । आदमी की टेढ़ी-मेढ़ी भद्दी, लुचपुच अँतरियाँ पूरे आसमान में छा गई थी और उनके भीतर मिसाईल एटनी बारहेड से लोडेड धूम रही थी । धरती चारों ओर सपाट हो चुकी थी । मिट्टी या बालू । मकान, शहर, सड़क, गली, नदियाँ, समंदर, पेड-पौधा-घास, कुछ नहीं बचा था । चारो ओर सपाट । नंग-धरंग आदमी की पूरी आबादी पसरी हुई थी । माँ-बाप, भाई-बहन, टोला-पडोस सब कुछ खत्म हो गया था । सब को अपनी पड़ी थी । सब आसमान की ओर देख रहे थे । अपनी मौत का रिप्ले ।

बदहवास लोग, लेटे-बैठे, खडे-पसरे । मुझे खाने की सूझी । भोजन कहाँ ? कहीं नही । ओह ! एक आदमी के हाथ में माँस टुकरा था । मैं दौडा उसके पीछे । वो भागा । एक ईट उठाकर मैंने उसके सिर पर दे मारा । वो ढ़ेर हो गया और उसके हाथ से माँस का टुकरा लेंकर मैं भागा । बदहवास, आबादी से दूर । भागता गया, भागता गया । काफी दूर-कोसों जाने के बाद जहाँ कोई नहीं था, निर्जन-नीरव, मैं रुका । मैंने माँस को देखा । वो कच्चा था । कैसे खाऊ इसे । मैं उलझन में पड़ गया । तभी शासक दिख पडा । मैंने उसे थामा, उसके हाथों में माँस का टुकरा देते हुए बोला लो खाओ इसे । कैसे खाओगे । तुमने कहा था मैनेज कर लेंगे । करो अब ।

शासक बोला क्या करें अब । मुझे कुछ सूझ नहीं रहा है ।

मैंने कहा - पहले चलो आबादी की ओर ।

अब हमारे पास यह समस्या थी की हमे मालुम नही था कि किधर जाएँ । कोई चिन्ह, कोई नामो-निशां नही बचा था ।

मैंने अकल से काम लिया । हम एक नदी के पास गए । मिसाईल अब भी एट भी वार हेड को लिए घूम रहा था । मैं नदी के काफी निकट गया और बालू पर उँगलियाॅ टेक-टेक कोई सूत्र पाने की कोशिस करने लगा । मैने शासक को पास बुलाया और कहा-देखो और पढो नदियों की धार की भाषा । वो इस ओर अपना सब कुछ देते हुए बढ़ रही थी । इस ओर आबादी होगी । चलो !

शासक ! नदी को तुमने देखा है ? देने के लिए जितना आगे बढ़ती है उतना विस्तार पाती है और अंत में समंदर बन जाती है ।

शासक ! सर्वस्व को आत्मसात करने के लिए कृष्ण बनो । कृष्ण की तरह बाहें फैलाकर हजारों गोपियाॅ को अंतर्लीन कर लो, न कि हजारों की मॉगों मे सिंदुर भर कर उन्हे अपनी प्रोपर्टी बना लो और अपना उपनिवेश कायम करो ।

शासक शर्मिंदा हो गया । हम चलते-चलते आबादी के पास पहुँच गए । सबसे पहले हमें एक बच्चा मिला । वह रो रहा था और कुछ कह रहा था ।

मैं उस बच्चे को सुनने के लिए झुका । फिर घुटने के बल बैठ गया । अपना सिर मैंने झुकाया । उसकी आँखों से आँसू जमीन पर गिर रहे थे । उससे सोंधी गंध आ रही थी ।

पता नहीं शासक देख रहा था या नहीं ।

मैं एक राष्ट्र हूँ

पहाड़ों, नदियाँ,जंगलों, समंदर से घिरा एक क्षेत्र था । मुझे बताया गया कि यह मेरा राष्ट्र है । मुझे इसकी भक्ति करनी है ।

उनने नीति गढ़े, काव्य रचे, उपदेश कहे । सुना, गुना ।

मेरे आगे समंदर था । अनंत तक फैला और पीछे राष्ट्र। समंदर की लहरें उठती आकाश की ओर। फिर पसर जाती अनंत तक । राष्ट्र का कूल भींग जाता ।

पर जाने क्यों, राष्ट्र इन्हे अनदेखा कर रहा था । उस दिन जब मंद-मंद हवा थोडी ठंड़क लिए हुई थी । मैं वहाँ बैठा था । समंदर से एक लहर उठी । फिर पसर गई । पसरी क्या, मुझे भिंगा गई ।

मेरे कपडे भींग गए । पूरे शरीर में सिहरन सी होने लगी । राष्ट्र ज्यों का त्यों था । वो बहुत बडा था । उसका बिल्कुल थोडासा हिस्सा भींग था ।

मैंने उससे पूछा - तुम्हे सेसेसन भी नहीं हुआ । वो कुछ नहीं बोला ।

मैंने सवाल को दुहराया, तिहराया तब हवा बोली - ठंडी या गरमी का एहसास तो जिगर से होता है । इसका जिगर अभी भींगा कहाँ है ।

उसे भी कभी समंदर जरुर भिंगा देगा । कहकर मैंने ठहाका लगाया ।

खैर ! उस दिन तो उठकर मैं चला आया । एकदिन फिर जब वहाँ बैठा था तो हवा बोली इस समंदर के पार. दूर एक और राष्ट्र है । वह भी बिल्कुल इसी राष्ट्र जैसा है ।

मैंने हवा की आँखो में आँखे डाली । उसे बुलाया । बिठाया । बाला तू बडी शातिर है री ! यहाँ वहाँ अल्हड की तरह फिरती है । घर-घर घुसती है और बातें बनाती है । ले चल न मुझे भी अपने साथ एकाध दिन ।

थोडे मान-मनौबल के बाद हवा तैयार हो गई । दुप्पट्टे को कमर में कसकर तैयार हुई । बाँहे फैलाकर उसने मुझे समेट लिया और लेकर उड़ चली इधर-उधर, जिधर।

उस उँचाई पर बादल, और बादल से भी उँचा मैं । नीचे जमीन, पहाड़, जंगल, समंदर । यह था अपना राष्ट्र उसके बगल में तीसरा । समंदर के पार भी राष्ट्र, उसक बगल में भी राष्ट्र । दाई बाजू में भी राष्ट्र, बाई बाजू में भी राष्ट्र ।

मैने अपनी उँगली के पोरों को हवा के होठों पर फिराया । यह राष्ट्रो का जंगल है क्या ?

नटखट ! -वो बोली ।

मुझे और शरारत सूझी । मैंने पूछा- हवा , तुम किस राष्ट्र में रहती हो ।

तुम्हारे जिगर मैं । वह बोली और शरमाकर उसने अपना चेहरा झुका लिया।

मैंने उसकी कुड़ढी पर हाथ लगाया, उसे उठाया आहिस्ता ।मजाक को होठों में छिपाकर पूछा - राष्ट्र के जिगर में क्यों नही रहती ?

असने मेरे बालों पर हाथ फिराया । बोली - राष्ट्र को जिगर नहीं होता ।

हवा ! चलो हम अपना राष्ट्र देखें । मैंने कहा । वो थोडा नीचे आई ।

हमने अपने राष्ट्र को देखा । राष्ट्र बिल्कुल कटोरे जैसा था । सब कुछ सतह से चिपका सा, लटका सा । मुँह मकड़ी के जाले सी किसी चीज से ढँका था और उसके बीच में एक बूढ़ा सा बैठा था ।

उसके आस-पास कई लोग बैठे थे, जो बुढ़े के हाथ से निकले एक सूत्र से बँधे थे । उनके हाथ से कई सूत्र निकले थे । जिनसे कुछ और बँधे थे । और इसी तरह उस कटोरे के भीतर के पेड़, पहाड़, जंगल, नदियाँ तक सभी किसी ने किसी सूत्र से बँधे थे ।

बूढ़ा अगर हाथ हिलाता तो एक-एक पेड, पहाड़, आदमी सभी हिल उठते । या नीचे से एक भी कुछ हिलता तो बूढ़े को पता चल जाता ।

ये बूढ़ा तो मदारी जैसा लगता है । बाकी सब उसके बंदर । मैंने हवा से कहा ।

हवा बोली - ऐसा नही बोलते । मुझे को और समंदर को छोड़कर बूढ़ा सबको बाँध सकता है।

राष्ट्र को मैंने देख लिया । हम नीचे आ गए ।

उस दिन जाने क्या हुआ, बूढ़े ने भोपा उठाया और चीखा । राष्ट्र पर संकट आ पड़ा है । सबको कुर्बानी देनी है । और भी न जाने क्या-क्या बड़ी देर तक बकता रहा बूढ़ा । इसके बाद उसने अपने जाले में थोडा सा छेंद बनाया । उसमें से वह एक-एक आदमी को बाहर निकालता और जाने किधर फेकता जाता था ।

मेरे नाम का भी सम्मन आया । मरने पर मुझे गहरी आपत्ति थी । जीने के लिए मेरे पास पर्याप्त कारण थे । मैंने निश्चय किया कि मैं कतई नहीं मरुँगा ।

सबसे पहले मैंने उस सूत्र को काट डाला जिससे बूढ़े ने मुझे बाँध रखा था । फिर मैंने अपना अंगोछा लिया। उसे एक डंडे से लगाया । डंडे को बाँस से, फिर बाँस को दूसरे बॉस से इसी तरह...।

जब मेरा झंडा काफी ऊपर हो गया तो मैने उसे बुढ़े के भोंपे में घुसेड़ दिया ।

मचा बबाल । दौडे भृत, गण, सचिव, चारण । मैं बूढ़े के पास ले जाया गया ।

बूढ़ा शांत था । उसने कुछ संकेत किया । गण मुझसे बोले कि मैं अपनी बात कहूँ । मुझे बताया गया कि तुम्हारा घर कुनबे के साथ है । पूरा कुनवाँ जबार के साथ है । पूरा जबार सूबे के साथ है । मुझसे कहा गया, तुम साबित करो कि तुम इन सबके साथ हो । मुझे पाँच मिनट का समय दिया गया ।

मैं चुप था । लोग सोच रहे थे । साबित करने का समय खत्म होता जा रहा था ।

मैंने अपना चेहरा उठाया । हाथ उठाकर बूढ़े को शांत रहने का निर्देश दिया ।

मैंने अपना चेहरा आसमान की ओर किया । मैंने अपनी बाँहे अनंत की ओर फैलाई । मैंने अपनी आँखो में सितारे भरे । खुद को तानपकर उँचा किया और हवा को चूमा ।

मैं चीखा **"मैं एक राष्ट्र हूँ ।"**

लाल

तुम्हारा नाम क्या है ?

नीली ।

और तुम्हारा ?

लाल ।

मुझे हँसी आ गयी । शायद ये लोग इंद्रधनुष बनायेंगे ? बाजू के जनाब चाचा जी ने मेरी पीठ पर हल्का घौल दिया ।

बहुत खूब बरखुध्दार ।

आपको क्या लगता है । मैंने तीखी नजर से सवाल दागा ।

मामला फिट्ट है । बढ़ा तो बड़गद गिरा तो बेल ।

हम आप जिस शहर में रहते है उससे यह थोड़ा अलग शहर है पर बिल्कुल नहीं । और मैं यहॉ कई महीनों से हूँ इसलिए यहाँ के चाल-चलन से अच्छी तरह वाकिफ हो चुका हूँ । ये जनाब कौन हैं ? क्या हैं ? मैं नही जानता पर मैं जहाँ रहता हूँ उसी के आसपास ये भी रहते हैं । मेरी अच्छी पटती है इनसे ।

मैं यहाँ अपनी कम्पनी के काम से आया हूँ । और मेरा काम है सिर्फ देखना । एक दिन जब मैं ऑफिस में अपने टेबल पर व्यस्त था सनकी मॅनेजर का लेटर आया । मुझे इस शहर को सिर्फ देखने का काम मिला था । अब भूगोल देखना है या इतिहास उसमें कुछ नहीं लिखा था । कौन जाए उस सनकी आदमी से सवाल करने । कम्पनी का तो भट्ठा बैठना ही है अगर ये रह गया ।

इसलिए मै सबकुछ देखता हूँ । रात को गलत-सही उसकी रोचक रिपोर्ट बनाता हूँ कि जाकर उस सनकी के टकले पर पटक सकूँ ।

मैं मजे में हूँ सिर्फ उस क्षण को छोड़कर जब मुझे घर की याद आती हो । और जनाब चाचा जी को कोई काम नहीं है । मैं खूब घुमता हूँ । चाचा जी साथ होते है । मैं भी कम बतक्कर नही हूँ । और चाचा जी नहले पे दहला ।

दोनों अभी वहीं थे। मैंने मुस्कराकर कहा बात आगे बढ़ गई ।

चाचाजी ने मुस्कुराकर मेरे इस कॉमेंट को टाल दिया । सहसा एक सवाल उछाला ।

तुम इस लाल को जानते हो ?

मैं हैरान ।

भला मैं क्यों जानूँ ?

तुम नहीं जानते ?

नहीं ।

अच्छा याद करो । कल पार्क में किसे देखा था हमने ।

अच्छा वहाँ । एक लड़का ओर एक लड़की । हाँ लड़के की शक्ल कुछ-कुछ मिलती है पर लड़की तो वो काली-कलुटी थी । ये गोरी-चिट्टी ।

हाँ ये वही लाल है ।

तो फिर ये लड़की ?

उन्हें मेरी नासमझी पर तरस आया । अन्होंने कहा ।

इस लाल को तो देख रहे हो ।

हाँ ! मैने कहा ।

और वहाँ देखो ।

अरे वो भी तो ऐसा ही है ।

हाँ । वो भी लाल है । और उसे चौराहे पर देखा ।

धत्-ते-रे-की । तीनों जैसे जुड़वा है ।

तीन ही नहीं ये देखो ।

हे भगवान । जैसे जादूगर जादू दिखाता हो । सौ-पचास लाल दिख पड़े मुझे ।

आप जिन्न - जिन्नात रखते हैं ? - मैने पूछा

क्यों ?

ये लाल कौन है ? यह क्या माजरा है ?

जैसे वो इतिहास के पन्ने में खो गए रू देखो । इस शहर में दो तरह के लोग है । एक मेरे तुम्हारे जैसे । जो जनमत है। खाते-पीते, नौकरी-चाकरी करते है । और मर जाते है । दूसरे लाल है । ये जनमते तो है पर मरते नहीं । बूढ़े नही होते और हाँ । हर लाल के पास कोई नीली होती है । जब ये नीली नहीं होती तो ये लाल हमें नहीं दिखते ।

ये कैसे होता है । मैने पूछा ।

देखो ! इस शहर के पार सटे एक तालाब है । उसमें कोई हमारे तुम्हारे जैसा आदमी अगर स्नान कर ले तो लाल बन जाता है । फिर वो न तो बूढ़ा होता है, न मरता है । हाँ ! शर्त एक ! उसे दुनियादारी से मतलब छोड़ना होता है । ज्यों ही दुनियादारी उसके भीतर घुसी लाल - खत्म ।

और फिर तालाब में नहा ले तो ।

नही फिर वो नही नहा सकता । वो च्युत हो जाता है । ऐसा ही नियम है ।

क्या हर लाल को नीली मिलती है ? मैंने पूछा ।

हाँ !

फिर आप क्यों नहीं नहाते इसमें ।

वो गमगीन हो गए । जज्बा नहीं । -उन्होंने कहा ।

लाल मरता नहीं है । हर लाल को नीली मिलती है ।

मैं अपनी आयडेंटी कार्ड कल तड़के फेंक दूँगा और मैं भी तालाब में नहाकर लाल बन जाऊंगा । मैंने सोच लिया है ।

तू बागवान ?

कोपल निकले, कलियाँ लगी-चटकी-फूल खिले । दूर देश तक खुशबू फैल गयी ।

बागवान मत्त । खुश खुशबू से । मुस्काया, हँसा, ठहाका लगाया, हिल गए दिग्-दिगंत । पर भौंरे को भी खबर लगी । आया, मँडराया, पंखुरियों पर बैठा, तंतुओं को छेड़ा ।

देखे कोई इधर ? छेडे कलियों को ? छूए उनकी पंखुडियाँ ? बागवान उद्दत । पेडों के चारो ओर कटीली झाडियाँ लगवाई । हाते की दीवारें ऊँची करवाई । संतरी बिठाए ।

संतरी बैठा । लाठियाँ भाँजी । धाँय-धाँय चलाई गोलियाँ । म्यान से निकाले तलवार । चमकाई धार पर भौंरे गोलियों के निशाने पे नहीं आ सके । उनपर तलवार की धार नहीं सध सकी । यों चली कि यों फिसली । उनका क्या ठिकाना । कभी यहाँ-कभी वहाँ ।

अचंभित बागवान ठिठका । फिर तन गया । ठानी उसने । बहेलिया बुलाया । बहेलिया आया । बहेलिया आया । देखा अपना रोजगार । मूछों पर हाथ फेरा । अकडा । फिर बोला, हुजूर । खतम हुआ यह खेल । देखूँ. पर मारता है कैसे कोई । बहेलिया लाया ट ट् टू गौरैया, ट ट् टू कौआ, ट ट् टू बाज । चारो ओर लगाया ।

काँव-काँव से तार-तार सुन्न हुआ । झिंगुर भी थर्राया । पर फूलों पर सावन आए । ओस बने । थपेडों ने बहलाया । फिर भी हो गई उदास ।

भौंरा ठिठका रहा । फिर ठानी । चला बाग की ओर । बिना अस्त्र ही, बिना शस्त्र ही । लघु जीवन उसका । लघु-लघु तत्वों से निर्मित । लघु व्याप्त यहाँ । लघु व्याप्त वहाँ । चला लक्ष्य की ओर । घेरा ट ट् टू कौआ, ट ट् टू बाज ने उसे । बाँए से. दाँए से, ऊपर से, नीचे से कलाबाजियाँ हुई एक के बाद एक, दसियों मिनट, फिर घंटे, फिर घंटो ।

भौंरा थककर चूर-चूर हो गया । भागा बगीचे से बाहर जान बचाकर । ट ट् टू गौरैया. ट ट् टू कौआ, ट ट् टू बाज सब चहके खुशी से । बहेलिया उछला । बागवान गरजा ।

इतने में भौंरा फिर आता दिखा । पर अबकी बडे ठाठ से आकर दूर की डाली पर बैठा । ठाठ देखकर ठिठके सब । दुबका ट ट् टू गौरैया । दुबका ट ट् टू कौआ, दुबका ट ट् टू बाज ।

बहेलिया था बुद्धिमान। समझा उसने वक्त की नजाकत । जेब से निकाला उसने लाल कपडा । दिखाया ट ट् ट बाज को खून ! खून ! खून !

ट ट् टू बाज उठा । झपटा । पकरा भौंरे को । उढरस्त कर गया ।

मामला खतम। ट ट् टू गौरैया, ट ट् टू कौआ, ट ट् टू बाज खुश। बहेलिया खुश। बागवान खुश । लगा ठहाका । हिल गए ढिग् ढिगंत ।

पर तभी हुआ गजब । ट ट् टू बाज के पेट को फाड़ भौंरा निकला । अपने से बड़ा होकर । १०० गुना, २०० गुना जितना बडा ।

झपटा । पकडा । गर्दन ममोरी । ट ट् टू गौरैया, ट ट् टू कौआ खतम ।

अगले पल पलटा । बन गया आदमी जैसा । पर आदमी से सौ गुना दो सौ गुना जितना बडा । पकडा बागवान की गर्दन बोला, बोल ।

बागवान मिमियाया । मैंने बाड लगाए । हाते बनवाए । उसके भीतर के पेड मेरे । उनकी कलियाँ मेरी । कोपल मेरे ।

भौरे (आदमी) ने बागवान के चारो ओर लकीरे खीची । बोला देख ये अहाता । इसके भीतर की जमीन मेरी । इसके भीतर का आदमी मेरा । गुलामी करता है मेरी ? या गर्दन दाबूँ ।

बागवान मिमियाया । गिरगिराया । लेटा दंडवत । पकडे चरण ।

भौंरा दिव्य हुआ ।   बागवान को उठाया । गले लगाया । उँगली से इंगित कर उसने सत्य दिखाया ।

समंदर, ऊपर चाँद, पानी चाँद को छूने के लिए उछलता ऊपर बार-बार ।